इकाई 14 नई और आविर्भावी कृषि कार्यप्रणालियाँ

संरचना

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 उत्पादन संबंधी कार्यप्रणालियाँ

- 14.2.1 मृदा उर्वरता/स्वास्थ्य
- 14.2.2 उर्वरक
- 14.2.3 सहक्रियाशील प्रभावों की उपलब्धि
- 14.2.4 अशांकित फसल (सस्यन) कार्यप्रणालियाँ
- 14.2.5 अनुक्रमिक अनेकधा सस्यन

14.3 धारणीयता संबंधी कार्यप्रणालियाँ

- 14.3.1 भूमि निम्नीकरण और मृदा अपरदन
- 14.3.2 पोषक पदार्थों का समाकलित प्रयोग
- 14.3.3 सिंचाई अनुसूचीयन

14.4 जल प्रयोग दक्षता प्रणालियाँ

- 14.4.1 जल का संयुक्त बहुविध प्रयोग
- 14.4.2 वैकल्पिक सिंचाई विधियाँ

14.5 संरक्षण कृषि कार्यप्रणालियाँ

14.6 वितरणात्मक प्रणालियाँ

14.7 नई प्रचलित कृषि कार्यप्रणालियाँ

- 14.7.1 कीटनाशक रहित प्रबंधन
- 14.7.2 चावल सघनता कृषि प्रणाली (SRI)
- 14.7.3 जैव खेती
- 14.7.4 संरक्षणात्मक कृषि प्रणालियों का अंगीकरण

14.8 सारांश

14.9 शब्दावली

14.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.11 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

14.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- सकल परिप्रेक्ष्य से ''कृषि कार्यप्रणालियाँ'' शब्द को समझा सकेंगे;
- उत्पादन संबंधी कार्यप्रणालियों की चर्चा उसके व्यापक घटकों में कर सकेंगे;

- स्पष्ट कर सकेंगे, कि धारणीयता के सरोकार अपनाई गई कृषि कार्यप्रणालियों में कैसे समाविष्ट किए गए हैं;
- वर्णन कर सकेंगे कि जल प्रयोग दक्षता कार्यप्रणालियों ने अनुसरित कृषि कार्यप्रणालियों में मुख्य स्थान कैसे ग्रहण किया;
- स्पष्ट कर सकेंगे, संरक्षण और फसल कटाई बाद की प्रबंधन प्रणालियों ने भारत में कृषि विकास की प्रगति में कैसे योगदान किया; और
- भारत में अपनाई गई कुछ नई कृषि कार्यप्रणालियों में सुधार कर सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों से स्पष्ट है कि कृषि ढाँचा संस्थागत व्यवस्थाओं, प्रौद्योगिकीय पद्धतियों और कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता के अनुसार भारी परिवर्तनों से गुजरा है। स्वतंत्रता के समय खाद्यान्नों की गंभीर कमी से प्रारंभ होते हुए कृषि उत्पादन ने 1980 के दशक तक खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त की है। हमने यह भी देखा है कि हरित क्रांति ने (जिसने खाद्य समस्या समाप्त करने में सहायता की), अपने आगमन से कई प्रतिकूल प्रभाव भी उत्पन्न किए, जैसे, रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग के कारण मृदा उर्वरता का अपरदन, शुष्क क्षेत्रों की उपेक्षा करने के कारण बढ़ती हुई क्षेत्रीय असमानताएँ और समरूप सहायता प्रणालियों के बिना अत्यधिक जोखिमों के कारण छोटे सीमांत किसानों में बढ़ती हुई विपत्तियाँ। इन कारणों के संयोजन ने GR के लाभ को विगत की घटना बना दिया और भारतीय कृषि और छोटे सीमांत किसानों को संकट की स्थिति में छोड़ दिया।

इस समय भारत के सम्मुख ऐसी कृषि उत्पादकता के पुनरुद्धारक और धारणीयता की चुनौती है जिसमें सभी क्षेत्रों में तथा किसानों के सभी वर्गों में उसके हितलाभों का न्यायसंगत वितरण हो। इस संदर्भ में नई कृषि कार्यप्रणालियां अपनाने की दिशा में कई पहल कार्य किए गए हैं। इन कार्यप्रणालियों को भारतीय कृषि के समक्ष उपस्थित मुख्य चुनौतियों के समाधान से जोड़ा गया है, जैसे (i) महत्त्वपूर्ण आदानों के फलोत्पादक उपयोग से फसलों के उत्पादन और उत्पादिता बढ़ाना; (ii) वैज्ञानिक संरक्षण प्रणालियों को व्यवहार में लाकर उत्पादन प्रणालियों की धारणीयता सुनिश्चित करना; और (iii) उपभोक्ता की बदलती हुई वरीयताओं के संदर्भ में बाजार से उत्पादन को जोड़ना। पृष्ठभूमि से इस इकाई में भारत में अपनाई गई विभिन्न कृषि कार्यप्रणालियों की चर्चा पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। कार्यप्रणाली की चर्चा निम्नलिखित चार मुख्य वर्गों में की गयी है : (i) उत्पादन संबंधी कार्यप्रणालियाँ; (ii) धारणीयता संबंधी प्रणालियाँ; (ii) जल प्रयोग दक्षता प्रणालियाँ; और (iv) संरक्षण तथा फसल कटाई के बाद प्रबंधन प्रणालियाँ।

14.2 उत्पादन संबंधी कार्यप्रणालियां

उत्पादन संबंधी कार्यप्रणालियों पर चर्चा कृषि संसाधन प्रयोग के कुछ प्रमुख घटकों से संदर्भ में हो सकती है। इन्हें मृदा, उर्वरक, अतिरिक्त पोषक पदार्थों और सस्यन क्रिया में परिवर्तनों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

14.2.1 मृदा उर्वरता/स्वास्थ्य

मृदा कई कारकों द्वारा निर्मित और परिपोषित प्राकृतिक संसाधन है। इसके परिपोषक तत्व हैं (i) जलवायु (तापमान और वर्षा); (ii) क्षेत्र की स्थलाकृति; (iii) सप्राण जीव जैसे वनस्पति; (iv) मूल सामग्री का स्वरूप (जैसे शैलों और खनिजों के प्रकार); और (v) समय (काल)। इस प्रकार, यह भौतिक प्रक्रिया और रासायनिक प्रक्रिया दोनों है। इस प्रक्रिया के दौरान बहुत जैव और खनिज पदार्थ जुड़ जाते हैं, नष्ट हो जाते हैं और रूपांतरित हो जाते हैं। मृदाओं का महत्त्व इस तथ्य में निहित है कि यह फसलों की वृद्धि के लिए आधारभूत माध्यम प्रदान करता है। वास्तव में, मृदा का प्रकार और स्वरूप ही निर्धारित करता है कि इसमें किन फसलों की खेती की जा सकती है। फसल उत्पादन करने के लिए मृदा की संभावना अधिकांशतः उसके जल भंडारण करने की क्षमता और इसकी अन्य विशेषताओं (जैसे अम्लता, गहराई और घनत्व) मिलकर निर्धारण करती है। इन्ही से यह तय होता है कि फसलों की जड़ें कैसे अच्छी विकसित हो सकती हैं। मृदा की इन विशेषताओं में परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप से पादप के स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। इसके अलावा समय के चलते फसलों की लगातार खेती से मृदा की अपेक्षित पोषक पदार्थ प्रदान करने की क्षमता कम हो जाती है। जैसे पौधे बढ़ते हैं, उनकी जीवित कोशिकाएँ अपने पर्यावरण से रासायनिक पदार्थ लेती हैं और पर्यावरण, विशेषकर मृदा की गुणवत्ता कम करते हुए ऊर्जा के स्रोत के रूप में उनका प्रयोग करते हैं। इसलिए उन कार्यप्रणालियों का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है जो अच्छे पादपों को जीवित रखने के लिए मृदा में प्रमुख पोषक पदार्थों का पुनरुद्धार करने या पुनःपूर्ति में सहायता कर सकती हैं। इसके साथ-साथ खेती करने के दौरान अपनाई गई अनुचित प्रणालियों सहित बहुत से प्राकृतिक कारक और मानवीय कारकों के कारण मृदा का निम्नीकरण उसे खेती के लिए अक्षम बना देता है। इस प्रकार ऐसी कार्यप्रणालियों के माध्यम से मृदा का प्रबंधन, जो मृदा उर्वरता और स्वास्थ्य पुनरुद्धार करने में सहायता करती हैं, कृषि उत्पादकता बनाए रखने के लिए अत्यधिक अपेक्षित है।

14.2.2 उर्वरक

उर्वरक कोई भी प्राकृतिक या संश्लिष्ट पदार्थ है, जिसे मृदा में फैलाने या काम में लाने पर, वह पादप वृद्धि में सहायता करने के लिए उसकी क्षमता बढ़ाता हो। ऐसे पदार्थ हो सकते हैं : (i) जैव पदार्थ या (ii) रासायनिक (अजैव) उर्वरक। उर्वरकों का प्रयोग मृदा की उर्वरता का पुनरुद्धार करने के लिए और उच्चतर कृषि उपज के लिए अपेक्षित उद्दीपक के रूप में भी महत्त्वपूर्ण और आवश्यक प्रणाली है।

जैव सामग्री : रासायनिक उर्वरकों के विकास से पहले विभिन्न रूपों में जैव स्रोत ही मृदा उर्वरता बढ़ाने और उसके भौतिक गुणधर्म जैसे पादप वृद्धि के लिए महत्त्वपूर्ण जल धारण क्षमता सुधारने के लिए प्रयुक्त किए जाते थे। जैव उर्वरक पादपों या पशुओं का प्राकृतिक पदार्थ जिसमें पशुधन खाद, हरी खाद, फसल अपशिष्ट, घरेलू अपशिष्ट और कंपोस्ट शामिल हैं। ऐसा पदार्थ या तो सीधे तौर पर या पशु या मानव खाद्य के रूप में चक्रित किए जाने के बाद प्रयुक्त किए जाते हैं। आज जैव पदार्थ के साथ रासायनिक उर्वरक के संयोजन जैव पदार्थ उपलब्ता के संपूरक के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं। जैव खाद के भिन्न-भिन्न प्रकार जिन्हें उर्वरक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, उनमें शामिल हैं : (i) ढेर सारी जैव खाद; (ii) सकेन्द्रित जैव खाद; और (iii) जैव उर्वरक।

ढेर सारी जैव खाद : इसमें पशुआहाता खाद (FYM), बड़ी मात्रा में मिलाया जाता है जो मृदा की भौतिक दशा सुधारने में सहायता करता है। यह निम्नलिखित द्वारा मृदा में सूक्ष्म जीवों के कार्य बढ़ाता है : (क) मृदा की जलधारण क्षमता सुधारना; (ख) वाष्पीकरण क्षतियाँ कम करना; (ग) मृदा तापमान नियंत्रित करना; और (घ) पादप वृद्धि के लिए अपेक्षित प्रायः सभी पोषक पदार्थ प्रदान करना। विशिष्ट आहाता खाद मुख्यतया पशुओं का गोबर होता है, साधारणतया गाँवों में उपलब्ध होता है, और प्रयोग करना आसान होता है। परंतु यह किसान परिवारों द्वारा ईंधन के रूप में भी प्रयुक्त किया जाता है और इसलिए FYM पूरी तरह से उर्वरक के रूप में प्रयोग के लिए उपलब्ध नहीं होता है। FYM द्वारा प्रदत्त पोषक पदार्थों की मात्रा इसकी कोटि पर निर्भर करता है जो पशुओं को दिए गए चारे द्वारा नियंत्रित होता है। इसका आशय है कि उसके पोषक तत्वों के आधार पर FYM की गुणवत्ता पशुओं को सकेन्द्रित चारा (जैसे बिनौलो की खली, अलसी की खली, सोया फीड, गेहूँ मूसी, फली, मूसा और दाना) खिलाकर सुधारी जा सकती है। जैव खाद की अन्य किस्में ग्रामीण और शहरी कंपोस्ट, जलमल पदार्थ और अवमल हैं। कंपोस्ट फार्म हाउसों, पशुशालाओं, कस्बों के कचड़े और मल अवशिष्ट के अपघटन से प्राप्त किया जाता है। दूसरे किस्म का कंपोस्ट मलजल भंडारण टैकों के तल पर तलछट (अवसाद) के रूप में गाढ़ा, नरम पदार्थ है, जिसमें पादप पोषक पदार्थों की बहुत मात्रा होती है। परंतु इन पदार्थों का उचित ढंग से उपचार होना चाहिए अन्यथा वे मृदा को क्षतिग्रस्त कर सकते हैं। किसानों द्वारा हाल ही में अपनाई गई एक अन्य प्रणाली कृषि वानस्पतिक खाद है। यह ऐसी प्रक्रिया है जिससे फार्म अवशिष्ट या वन का कूड़ा करकट गड्ढे में इकट्ठा किया जाता है और कैचुए का प्रयोग कर कंपोस्ट बनाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। तैयार करने की विधि अपेक्षाकृत सरल है और उत्पादित कंपोस्ट में महत्त्वपूर्ण तत्व, जैसे कार्बन, नाइट्रोजन और फास्फोरस होते हैं। हरित खाद का प्रयोग भारत में बहुत लंबे समय से किसानों द्वारा किया जाता है। इसमें मृदा की भौतिक दशा सुधारने के लिए और उसकी उर्वरता बढ़ाने के लिए भी हरे पादप टिशू की मृदा में हल चलाना शामिल है। साधारणतया हरी खाद बनाने के लिए बोयी जाने वाली विशिष्ट फसलें वे हैं जिसमें बहुत अधिक पत्ते होते हैं और अपने जीवन चक्र की प्रारंभिक अवस्था के दौरान बहुत तेज़ी से बढ़ते हैं। वे घटिया मृदा में भी अच्छी तरह से उगने में सक्षम हैं और उनमें गहरी जड़ प्रणाली भी है। हरी खाद से मृदा को अधिक उपजाऊ बनाना अन्य प्रकार के उर्वरकों की अपेक्षा बहुत कम खर्चीला है। कुछ हरी खाद पादप जैसे सेम, मटर या मूली खाद्य पदार्थ भी होते हैं। इसके अलावा उगने की प्रक्रिया के दौरान ये पादप शीर्ष मृदा अपरदन भी रोकते हैं और उनकी गहरी जड़ें कठोर पटल को तोड़ने में सहायता करती हैं। किसान मृदा की उर्वरता बढ़ाने के लिए अपने फसल आवर्तन में हरी खाद फसलों का समावेश करते हैं। गंगा के मैदानों के लिए इस प्रणाली की विशेष रूप से संस्तुति की गई है जहाँ उत्पादन की चावल-गेहूँ प्रणाली विद्यमान है और मृदा की उत्पादकता का ह्रास हो रहा है।

सांद्रित जैव खाद में खली शामिल होती है। खली ठोस अवशिष्ट है जो तेलधारी बीज दबाकर तेल निकालने के बाद बची रहती है। उन्हें पशु चारों में मिलाकर या उर्वरक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, यह इस पर निर्भर करता है कि वे खाद्य हैं या अखाद्य हैं। खाद्य खली बिनौलों, मूंगफली, अलसी, सोयाबीन, तेरिया बीज और नारियल से निकाली जाती है। अखाद्य खली वे खलियां हैं जो अखाद्य तिलहन फसलों जैसे एरंड, नीम, कुसुम, करंज और महुआ से प्राप्त की जाती हैं।

जैव-उर्वरक कतिपय मृदा जीवों का कृत्रिम रूप से प्रवर्धित जीवाणु समूह हैं जो मृदा उर्वरता और उत्पादकता सुधार सकते हैं। वे ऐसे उपक्रम हैं जिनमें सक्रिय घटकों के रूप में सूक्ष्म जीवों की दक्ष प्रजातियों की सजीव कोशिकाएँ होती हैं। इन सूक्ष्म जीवों का पादपों से प्रतीकात्मक संबंध होता है और पोषक पदार्थ लेने में उनकी सहायता करता है। जैव उर्वरक मृदा में कुछ सूक्ष्मजीवी प्रक्रियाएँ तेज़ करता है जो पादपों द्वारा आसानी से आत्मसात होने योग्य पोषक पदार्थों की उपलब्धता की सीमा बढ़ाता है।

रासायनिक/खनिज उर्वरक

परंपरागत रूप से किसानों ने मृदा उर्वरता की पुनःपूर्ति के लिए जैव उर्वरकों (मुख्यतया आहाता खाद) प्रयोग किया है। परंतु जैव पदार्थों द्वारा मृदा में जोड़े गए पोषक पदार्थों की मात्रा कम है और जैव खाद का अपघटन प्रायः धीमी प्रक्रिया है। इसलिए अजैव उर्वरक नाम के रासायनिक या संश्लिष्ट उर्वरकों का प्रयोग अधिक अच्छा विकल्प है। इसका अभिप्राय है कि उनकी उपज संभावना केवल तभी प्राप्त की जा सकती है यदि महत्त्वपूर्ण रूप से अपेक्षित आदानों के रूप में उर्वरकों की सही मात्रा और किस्म प्रयोग होती है (यह अल्पकालीन किस्मों के विकास द्वारा संभव हुआ)। वर्ष में दो या अधिक फसलों की खेती करने के लिए एकधा सस्यन से बहुसस्यन प्रणालियों में परिवर्तन से रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग व्यापक रूप से होने लगा है।

रासायनिक उर्वरकों में एक या अधिक पादप पोषण पदार्थ होते हैं जो आसानी से पानी में घुल जाते हैं और इस प्रकार पादपों को शीघ्रता से उपलब्ध हो जाते हैं। इन्हें वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा निर्धारित भिन्न-भिन्न फसलों के लिए नियत खुराकों (डोज) में प्रयोग करना आवश्यक है। खुराक के अलावा समय और अनुप्रयोग की विधि भी महत्त्वपूर्ण है। इस प्रणाली के अनुप्रयोग के परिणामस्वरूप ''हरित क्रांति'' विधियों के अधीन फसलों का उच्च उत्पादन हुआ है। रासायनिक उर्वरकों के माध्यम से आपूर्ति किए गए मुख्य पोषक पदार्थ हैंः नाइट्रोजन (उदाहरण के लिए, यूरिया नाइट्रोजनी उर्वरक है जो पादप वृद्धि के लिए अपेक्षित मुख्य रसायन है) फास्फोरस और पोटैशियम अर्थात् (NPK) ये पादप वृद्धि और उत्तरजीविता के लिए अपेक्षित वृहद् पोषक पदार्थ हैं।

खनिज उर्वरक रासायनिक उर्वरकों का एक अन्य प्रकार है जिन्हें फसलों के लिए उगाने की ऋतु में कम से कम दो-बार प्रयोग करना आवश्यक है। यह या तो रोपाई अवस्था में मूलरूप से हो या वानस्पतिक वृद्धि अवस्था के दौरान फसल में बिखेर कर हो सकता। अधिकांश छोटे धारक सस्य प्रणालियों में प्रयुक्त जैव खाद की मात्रा निम्नलिखित कारणों से संस्तुत मानकों से काफी कम प्रयुक्त की जाती है। इसके कारण हैं : (i) छोटे किसानों की न्यून क्रय शक्ति; (ii) खराब या अनिश्चित वर्षा का भय से (अधिक व्यय के जोखिम से बचना); और (iii) बाजार की अनिश्चितता के कारण अपर्याप्त प्रतिलाभ। परंतु जब ये उपलब्ध हों तो उर्वरक का प्रयोग श्रमिक प्रधान न होने के कारण किसानों को अन्य कार्य करने के लिए समय मिल जाता है (इससे अन्यत्र आय अर्जित की जा सकती है।)

14.2.3 सहक्रियाशील प्रभावों की उपलब्धि

जैव और अजैव दोनों उर्वरकों का प्रयोग कृषि उत्पादन प्रोत्साहित करने के लिए महत्त्वपूर्ण है। समाकलित पोषक पदार्थों की आपूर्ति और प्रबंधन में, संतुलित तरीके में पादपों/फसलों द्वारा अपेक्षित सभी महत्त्वपूर्ण पोषक तत्वों की सफल और विवेकपूर्ण

आपूर्ति/प्रयोग अंतर्निहित है। इसमें मृदा की उत्पादकता बनाए रखने या सुधारने के लिए जैव और जैविक पोषक तत्वों में संयोजन से रासायनिक या खनिज उर्वरकों का प्रयोग शामिल है। रासायनिक उर्वरक ऐसे पोषक तत्वों के सांद्रित स्रोत हैं जिन्हें पादप तेज़ी से अवशोषण करते हैं। दूसरी ओर, जैव खाद अपेक्षाकृत कम पोषण तत्व देता है परंतु ऐसे तरीके में मृदा की भौतिक विशेषताओं को सुधारने में सहायता करता है जो पादप वृद्धि के लिए सहायक है। हरी खाद (जैसे फसल कटाई के बाद अवशिष्ट) मृदा का स्वास्थ्य और गुणवत्ता सुधारने के अलावा नाइट्रोजन की आपूर्ति बढ़ाती है। जैव खेती प्रणालियों के मिश्रित प्रयोग का सहक्रियाशील प्रभाव मृदा की रासायनिक भौतिक और जैविक विशेषताओं को सुधारने में सहायक है। इसके फलस्वरूप फसल उत्पादकता में वृद्धि होती है।

14.2.4 अशांकित फसल कार्यप्रणालियाँ

समय के गुज़रने के साथ-साथ किसानों ने अपने अनुभवों से सीखा है कि उसी भूमि पर बार-बार उसी फसल की खेती से फसल की उपज में ह्रास होता है। इस स्थिति का समाधान करने के लिए अपनाई गई वैकल्पिक प्रणाली है, ''सस्य आवर्तन''।

सस्य आवर्तन में एक अनुक्रम में भिन्न-भिन्न फसलों की खेती होती है जिसमें जैसे अन्य फसलों के अवशिष्ट जैव खाद के रूप में कार्य करते हैं। भारत में, तीन ऋतुएं होती हैं, जिनमें कुछ फसलें वर्ष भर उगाई जा सकती हैं। तीन ऋतुएँ हैं, बरसात या खरीफ ऋतु (जुलाई से अक्टूबर तक), शीत या रबी ऋतु (अक्टूबर से मार्च तक), और जायद (अप्रैल से जून तक) होता है। इन ऋतुओं के दौरान फसलें एक अकेली फसलों या मिश्रित फसलों (अर्थात् सस्यन) के रूप में उगाई जाती हैं। यदि किसी ऋतु में केवल एक फसल उगाई जाती है तो यह एकधा सस्यन कहलाती है और दो फसलें एक साथ उगाई जाती हैं तो दुहरी फसल कहलाती है। आवर्तन सस्यन एक निश्चित अनुक्रम में दो या अधिक फसलों की खेती है और जब भूमि के उसी खंड से वर्ष में दो से अधिक फसलें ली जाती हैं तो यह बहु-सस्यन कहलाती है। कौन-सी सस्यन प्रणाली किस क्षेत्र में पायी जाती है यह किसानों के अनुभव, व्यक्तिगत वरीयता और कार्य कुशलता, सरकारी नीतियां, संसाधन उपलब्धता, क्षेत्र में विद्यमान नाशीजीवों और रोगों की अनुक्रिया, पारिस्थितिक उपयुक्तता और व्यावहारिकता, जलवायु दशाएं, सामाजिक-आर्थिक कारक और बाजार मांग आदि का संचयी परिणाम है। विभिन्न फसल क्रमों की प्रबलता के आधार पर देश को कई कृषि क्षेत्रों में विभाजित किया गया है।

14.2.5 अनुक्रमिक अनेकधा सस्यन

अनुक्रमिक अनेकधा सस्यन की प्रणाली में सघन आदान प्रबंधन के साथ अल्पकालिक विविध फसलों की खेती अंतर्निहित है। यह मुख्यतया सिंचित क्षेत्रों में की जाती है और भूमि उपयोग कुशलता बढ़ाने में सहायता करती है। खास फसल आवर्तन प्रणाली अपनाने में मुख्य महत्त्व भूमि के प्रति इकाई आर्थिक प्रतिलाभ का होता है। परंतु खास प्रणाली की लाभकारिता-आदान लागत और उत्पाद कीमतों पर निर्भर करती है और इसलिए भारत जैसे देश में सरकार की नीतियों में परिवर्तनों के प्रति अतिसंवेदनशील है। उदाहरण के लिए, भारत में अपनाए जा रहे फसल आवर्तन निम्न प्रकार हैं : उड़ीसा में चावल-गेहूँ-लोबिया; महाराष्ट्र में चावल-फरास बीन-मूंगफली और मूंगफली-चना; उत्तर

प्रदेश के पश्चिमी भागों में चावल-आलू-हरे चने और उत्तर पश्चिमी-मध्य हिमालय में चावल-गोभी-आलू और कचालू-मूली-फरासबीन।

बोध प्रश्न 1

नीचे दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50 शब्दों में दीजिए।

1) उन तीन मुख्य चुनौतियों का उल्लेख कीजिए, जिनके इर्द-गिर्द विभिन्न कृषि कार्यप्रणालियां घूम रही हैं?

.....

.....

.....

.....

2) उर्वरकों को किन दो समूहों में वर्गीकृत किया गया है, तथा किस समूह में पादप और पशु के प्राकृतिक पदार्थ को तरजीह दी जाती है?

.....

.....

.....

.....

3) वे मुख्य तीन कारक क्या हैं जो भारत में छोटे किसानों को पर्याप्त मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करने से रोकते हैं।

.....

.....

.....

.....

4) भारत में आनुक्रमिक अनेकधा सस्यन व्यापक रूप से प्रयुक्त क्यों नहीं किया जाता है? किन क्षेत्रों में भूमि उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिए इसे प्रयुक्त किया जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

14.3 धारणीयता संबंधी कार्यप्रणालियाँ

धारणीय कृषि कार्यप्रणालियां इस सिद्धांत पर आधारित हैं कि हमें भावी पीढ़ियों की उनकी आवश्यकताएँ पूरी करने की क्षमता से कोई समझौता किए बिना वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए। इसे उन कृषि कार्यप्रणालियों के अनुसरण करने के रूप में परिभाषित किया गया है जो लंबे समय में निम्नलिखित करेंगी : (i) पर्यावरण संबंधी गुणवत्ता और उस संसाधन आधार को बढ़ाना जिन पर कृषि निर्भर होती है; (ii) पर्यावरण संबंधी गुणवत्ता पर कोई समझौता किए बिना बुनियादी मानव खाद्य और रेशों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना; (iii) अंतर्निहित आदान लागत और प्राप्त प्रतिलाभ के अनुसार आर्थिक व्यावहारिकता सुनिश्चित करना; (iv) किसानों और समग्ररूप में समाज का जीवन स्तर सुधारना। इसमें मानवीय और प्राकृतिक, दोनों संसाधनों के प्रबंधन का मुख्य महत्त्व है। मानव संसाधनों के प्रबंधन में सामाजिक उत्तरदायित्वों का महत्त्व शामिल है, जैसे कृषि श्रमिकों का कार्य और जीवन दशा सुधारना; (ii) ग्रामीण समुदायों की आवश्यकताएँ पूरी करना; और (iii) वर्तमान और भावी दोनों पीढ़ियों की सुरक्षा और उपभोक्ता स्वास्थ्य सुनिश्चित करना। दूसरी ओर, प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में दीर्घकालिक आवश्यकताओं के लिए महत्त्वपूर्ण संसाधन आधार बनाए रखना या बढ़ाना अंतर्निहित है। इस इकाई में, हम भूमि और जल जैसे प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में अनुसरण की गई कार्यप्रणालियों पर संक्षेप में चर्चा करेंगे।

14.3.1 भूमि निम्नीकरण और मृदा अपरदन

भूमि निम्नीकरण कई प्रक्रियाओं का मिश्रण है जिनका परिणाम कृषि भूमि की जैविक या आर्थिक उत्पादकता का ह्रास या क्षति है। भूमि का निम्नीकरण करने वाली प्रक्रियाओं में (वायु और/या जल द्वारा किया गया) मृदा अपरदन, मृदा की भौतिक रासायनिक और जैविक गुणधर्मों और प्राकृतिक वनस्पति की दीर्घकालिक क्षति शामिल है। मृदा का अपरदन निम्नकरणी का प्रमुख कारण है जिसका परिणाम शीर्ष मृदा की क्षति और उसमें नालियों तथा गलियों की रचना हो जाती है।

मृदा अपरदन पर्याप्त खाद्य उत्पादन करने की हमारी क्षमता के बने रहने के लिए गंभीर संकट बनता जा रहा है। मृदा को यथास्थान रखने के लिए कई प्रणालियां विकसित की गई हैं। इनमें जुताई, अपवाह, कम करने या समाप्त करने के लिए सिंचाई प्रबंधन और पादपों तथा पलवार (मल्च) से मृदा को ढका हुआ रखना शामिल है। मृदा की गुणवत्ता की वृद्धि पोषक तत्वों के समाकलित प्रयोग द्वारा प्राप्त की जा सकती है, जैसा कि हम आगे उल्लेख करने जा रहे हैं।

14.3.2 पोषक पदार्थों का समाकलित प्रयोग

रासायनिक उर्वरकों के धारणीय प्रयोग में ऐसे मृदा परीक्षणों पर आधारित उर्वरकों की सही किस्म का प्रयोग अंतर्निहित है जो विशिष्ट पोषक तत्व की कमी की मात्रा निर्धारण में सहायता करते हैं। प्रयोगशालाओं में मृदा का उसके फास्फोरस और समस्त और सूक्ष्म स्तरीय पोषक तत्वों कमी के लिए परीक्षण किया जा सकता है। इसके लिए कृषि विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थाओं पर स्थापित और खंड स्तर पर स्थापित परीक्षण प्रयोगशालाओं में सुविधाएँ विद्यमान हैं। इसके अलावा, मिनी मृदा परीक्षण किटों से बड़े पोषक तत्व स्तरों (जैसे NPR) का आकलन फार्म में भी किया जा सकता है।

मृदा परीक्षण और पादप आवश्यकताओं के आधार पर उर्वरकों की उपयुक्त मात्रा का प्रयोग करने के अलावा अनुकूल संयोजन में जैव और रासायनिक दोनों उर्वरकों का समाकलित प्रयोग वह प्रणाली है जिसे न केवल कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है बल्कि भूमि संसाधनों का धारणीय प्रयोग सुनिश्चित करने के लिए भी किया जाता है। समाकलित पोषक तत्व प्रबंधन में संतुलित तरीके में पादपों/फसलों द्वारा अपेक्षित सभी महत्त्वपूर्ण पोषक तत्वों की कार्यक्षम और विवेकपूर्ण आपूर्ति/प्रयोग अंतर्निहित है। इससे मृदा के रासायनिक और भौतिक गुणधर्मों के प्रत्यास्थापना और सुधार में सहायता मिलती है।

14.3.3 सिंचाई अनुसूचीयन

फसल विशिष्ट जल आवश्यकता ही नहीं पादप के वृद्धि चक्र की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में भी जल की आवश्यकताएँ अलग-अलग होती हैं। स्थानीय जलवायु और मृदा दशा को भी फसलों की जल उपलब्धता प्रभावित करती है। पादप वृद्धि की कतिपय विशेष अवस्थाओं में जल की अनुपलब्धता पुण्यन और दाना विकास को बाधित कर सकती है। इसी प्रकार, अत्यधिक जल की व्यवस्था भी प्रति उत्पादनकारी हो सकती है, क्योंकि, फसलें आवश्यकता से अधिक जल का उपयोग नहीं कर सकती हैं और संतृप्त मृदा में घटे हुए ऑक्सीजन स्तरों का दबाव हो सकता है। इन प्रभावों का सामना करने के लिए सिंचाई की समय सारणी तैयार करने की प्रणाली का अनुसरण किया जाता है। इससे उन घटनाओं को न्यूनतम करने में सहायता मिलती है जहां बहुत कम या बहुत अधिक जल फसलों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। उत्पादकों द्वारा उपयुक्त सिंचाई समय सारणी में फसलों के लिए प्रयुक्त किए जाने वाले जल का समय और मात्रा की सिंचाई समय सारणी तैयार किया जाना अंतर्निहित है। यह ऐसे कारकों पर आधारित होता है जैसे फसल में जल मात्रा, जड़ क्षेत्र, अंतिम बार सिंचाई के बाद और फसल विकास अवस्था के दौरान फसल द्वारा ग्रहण की गई जल की मात्रा आदि।

14.4 जल प्रयोग दक्षता प्रणालियाँ

कृषि जल का सबसे बड़ा उपभोक्ता है और पेयजल की उपलब्धता धीरे-धीरे घट रही है। कृषि, घरेलू और औद्योगिक सेक्टरों से बढ़ती हुई मांग के कारण हमारे जल संसाधनों पर भारी दबाव के कारण सिंचाई पर विचार करने के लिए विवश कर रहा है जो न केवल पादप जल आवश्यकता पूर्ति के लिए इष्टतम जल प्रबंधन की दृष्टि से विचार करेगा बल्कि उर्वरक जल प्रयोग दक्षता बढ़ाने के अधिक व्यापक मुद्दों पर भी विचार करेगा। इसमें बुनियादी रूप से पादप के लिए जल उपलब्धता सुधारने और सिंचाई के दौरान जल क्षति न्यूनतमीकरण अंतर्निहित है। धारणीयता के दृष्टिकोण से आविर्भावी प्रणालियों में सिंचाई की वैकल्पिक विधियों का प्रयोग जैसे टपकन और छिड़काव (ड्रिप और स्प्रिंक्लॅर) सिंचाई शामिल है। इन विधियों से वाष्पीकरण से जल की क्षति काफी में कम हो जाती है और पादप के लिए जल उपलब्धता बढ़ जाती है।

उपर्युक्त संदर्भ में, ''जल उपयोग दक्षता'' की उपज प्रति इकाई क्षेत्रफल और प्रयुक्त जल की प्रति इकाई के रूप में परिभाषित किया जाता है। भिन्न-भिन्न फसलों/किस्मों की जल आवश्यकता अलग-अलग होती है। उदाहरण के लिए, शुष्क हितलाभों की इकाई उत्पादन करने के लिए गेहूँ की अपेक्षा चावल को बहुत अधिक जल की आवश्यकता होती है, इसका आशय है कि Kg/ha-cm में मापी गई चावल की जल

प्रयोग दक्षता गेहूँ की तुलना में बहुत कम है। उसी फसल में भिन्न-भिन्न किस्मों की भी जल आवश्यकताएँ और उपयोग दक्षता भिन्न-भिन्न हैं। इस प्रकार उपयुक्त फसलों और किस्मों का चुनाव जो उगाई क्षेत्र में उपलब्ध जल के बेहतर अनुकूल हो, सरल प्रणाली है, जो जल प्रयोग दक्षता सुधारने में सहायता करती है। फसल किस्म का उपयुक्त विकल्प अपनाने की इस प्रणाली के अलावा जल प्रयोग दक्षता के उच्चतर स्तर के लिए विकसित कुछ नयी प्रणालियां हैं, जो इस प्रकार हैं –

14.4.1 जल का संयुक्त बहुविध प्रयोग

जल का संयुक्त प्रयोग एवं सिंचाई प्रबंधन ऐसी तकनीक है जो सिंचित कृषि की उत्पादकता और लाभकारिता बढ़ाने में सहायक होती है। इसमें बहुस्रोतों, जैसे नदियों, नहरों और भौमजल से कुल जल का समन्वित प्रयोग अंतर्निहित है। भिन्न-भिन्न का इष्टतम उपयोग फसल उत्पादन वर्ष की संपूर्ण अवधि के लिए जल की उपलब्धता सुनिश्चित करता है। जल का संयुक्त प्रयोग के लाभ निम्नलिखित के लिए है : (i) नहर या भौमजल की कमी घटाना; (ii) विद्यमान जल आपूर्तियों की विश्वसनीयता बढ़ाना; (iii) नहर सिंचाई के कारण उच्च भौमजल स्तर और लवणता की समस्या समाप्त करना; और (iv) अवमिश्रण द्वारा नमकीन भौमजल का प्रयोग सुकर बनाना।

जल का कई प्रकार उपयोग किया जा सकता है जो उसके अभिप्रेत प्रयोग से स्वतंत्र हो सकता है। उदाहरण के लिए, सामुदायिक या व्यक्तिगत किसान का तालाब जो पानी को सिंचाई कार्यों के लिए इकट्ठा करता है, मत्स्य प्रजनन के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है जो उच्च मूल्य की पण्यवस्तु है। इससे जल की आर्थिक उत्पादकता में सुधार हो सकता है।

14.4.2 वैकल्पिक सिंचाई विधियाँ

सिंचाई की तीन मुख्य विधियाँ हैं। ये हैं : (i) पृष्ठीय (या मुख्य) सिंचाई, (ii) छिड़काव सिंचाई, और (iii) टपकन (ड्रिप) सिंचाई।

पृष्ठीय सिंचाई : फसलों की सिंचाई करने की परंपरागत विधि है जिसे अभी भी व्यापक रूप में प्रयुक्त किया जाता है। इसमें मृदा पृष्ठ पर अधिकांशतः गुरुत्व प्रवाह द्वारा पानी को बहाकर फसलों में प्रयुक्त किया जाता है। परंतु यह सिंचाई का अक्षम तरीका है जहाँ पानी की बहुत बर्बादी होती है, जल प्लावन और लवणीकरण की समस्या के कारण आमतौर पर समग्र दक्षता कम रह जाती है। जब पूरा खेत पानी से लबालब हो जाता है तो यह बेसिन सिंचाई कहलाती है। इस विधि से जल की काफी क्षति के कारण संशोधित पृष्ठीय सिंचाई विधियों का विकास हुआ, जैसे (i) खूड सिंचाई विधि, और (ii) रोक बेसिन विधि। खूड सिंचाई विधि में भूमि के अनुद्धैर्य ढलान के साथ-साथ खूड तैयार किए जाते हैं और पानी छोटी नालियों या पट्टियों में छोड़ा जाता है। इन खूडों से होकर अनुदैर्ध्य ढलान और पार्श्व दोनों के साथ पानी का संचलन जल प्रयोग दक्षता बढ़ाता है। सिंचाई की रोक बेसिन विधि समतल भूखंडों के लिए उपयुक्त है। इसमें पानी छोटी मेड़ों से घिरे हुए भूखंड में भरा जाता है। भूखंडों की सिंचाई मुख्य और पार्श्व नलियों द्वारा की जाती है। मुख्य नाली खेत के ऊपरी सिरे की सीध में बनाई जाती है और पार्श्व नालियां किसी भी ओर बनाई जा सकती हैं। ये दोनों विधियां जल प्रवाह की गति पर नियंत्रण द्वारा सिंचाई की उच्चतर दक्षता प्राप्त करने के लिए हैं और इनसे जल क्षति कम से कम करने का प्रयास किया जा सकता है।

छिड़काव सिंचाई प्रणाली प्राकृतिक वर्षा के सदृश्य होती है। इसमें पानी पाइपों से पम्प द्वारा किया जाता है और तब स्प्रिंक्लेर के शीर्षों के घूर्णन द्वारा फसल पर छिड़काव किया जाता है। ये प्रणालियाँ पृष्ठीय सिंचाई की अपेक्षा अधिक दक्ष हैं, क्योंकि पानी समान रूप से मुहैया करते हैं, अपवाह रोकते हैं और बाहरी रिसाव क्षति न्यूनतम करते हैं। परंतु जल आपूर्ति दावानुकूलित करने के अलावा उन्हें स्थापित करना और प्रचालन करना महंगा होता है। परंपरागत छिड़काव प्रणालियों में पानी का छिड़काव हवा में वाष्पीकरण द्वारा पानी की बहुत अधिक मात्रा नष्ट करता है। निम्न ऊर्जा अशांकन अनुप्रयोग (LEPA) अधिक दक्ष विकल्प देता है। इस प्रणाली में पानी ड्राप ट्यूबों से फसल में वितरित किया जाता है जो स्प्रिंक्लेर की भुजा तक फैलता है जब अन्य उपयुक्त जल बचत कृषि तकनीक के साथ प्रयुक्त किया जाता है LEPA काफी अधिक (95 प्रतिशत तक) दक्षताएँ प्राप्त कर सकता है। इसके अलावा, चूंकि यह विधि निम्न दबाव पर कार्य करती है इसलिए यह ऊर्जा लागत में परंपरागत प्रणालियों की तुलना में 20 से 50 प्रतिशत बचत भी करता है।

ड्रिप सिंचाई विधि सबसे अधिक दक्ष सिंचाई विधि है। यह निम्न प्रवाह प्रौद्योगिकी प्रयोग करता है और पादपों की जड़ों में उचित दर पर ठीक-ठीक और सीधे पानी देता है। पानी रिसाव और अपवाह रोकता है। फसल को पानी धीरे-धीरे लगातार या बूंद-बूंद टपका कर दिया जाता है। टपकाने का खर्चा बहुत अधिक परंतु जल बचत के लाभ पादप वृद्धि और उपज बढ़ाते हैं, और श्रम और ऊर्जा की बचत उच्च संस्थापन लागत की प्रति पूर्ति करता है। यह प्रणाली उर्वरक अनुप्रयोग की दक्षता भी सुधारता है और मृदा अपरदन नहीं करती, (जैसा कि अन्य विधियों जैसे पृष्ठीय छिड़काव सिंचाई में होता है)। अनुसंधान से ज्ञात हुआ है कि गन्ना की फसल में ड्रिप सिंचाई से उपज में 35 प्रतिशत वृद्धि हुई है, पानी बचत में 50 प्रतिशत बचत और श्रम लागत में 35 प्रतिशत बचत हुई है। उपज में वृद्धि और जल तथा श्रम में इसी प्रकार की बचत ड्रिप सिंचाई से अन्य फसलों जैसे केला और नींबू में बताई गई है।

14.5 संरक्षण कृषि कार्यप्रणालियाँ

संरक्षण कृषि इस दृष्टि से परंपरागत कृषि से भिन्न है कि यह मृदा और कृषि पारितंत्र संसाधनों के दोहन से अधिकतम उपज पाने का लक्ष्य नहीं रखता है, बल्कि, यह कृषि आर्थिक और पर्यावरण का संतुलन प्राप्त कर उपज (और लाभ) इष्टतम करने का प्रयास करता है। संरक्षण कृषि धारणीय कृषि और ग्राम विकास में अपने योगदान के अलावा भावी खाद्य मांग पूरा करने के लिए सशक्त विकल्प भी प्रस्तुत करती है। यह निम्नलिखित में उपयोग की प्रणालियाँ अपनाकर प्राप्त की जाती है : (i) आदानों की दक्षता बढ़ाना, (ii) फार्म आय बढ़ाना; (iii) फसल उपज और प्राकृतिक संसाधन आधार की रक्षा करना तथा उसे सजीव रखना। इसलिए संरक्षण कृषि फसल उत्पादन, प्राकृतिक संसाधन आधार, जैव विविधता, जीविका आवश्यकताएँ आदि की समस्याओं का समाधान करती है। अपनाई गई कार्यप्रणालियां संरक्षण कृषि के तीन अंतर्बद्ध सिद्धांतों अर्थात् न्यूनतम मृदा बाधा, मृदा आवरण का परिरक्षण और फसल क्रम की विविधता से संबंधित है।

न्यूनीकृत जुताई या संरक्षण जुताई उस प्रणाली से संबद्ध है जिसमें फसल के अवशिष्टों (या ढूंठों) को भूमि पर रहने देकर मृदाबाधा कम से कम की जाती है ताकि ये ढूंठ मृदा में समाविष्ट हो सकें। ऐसी जुताई प्रणालियां जुताई की संख्या कम करते

हुए जुताई पूरी तरह से बंद करने तक जा सकती है। यह प्रणाली शून्य जुताई कहलाती है। न्यूनीकृत या शून्य जुताई के लाभ वायु और जल मृदा अपरदन की रोकथाम और उपजाऊ शीर्ष मृदा की रक्षा है। इससे केंचुओं की संख्या में वृद्धि भी होती है जो मृदा उर्वरता सुधारने में उपयोगी है।

पलवारना (मल्च बनाना) यह एक अन्य सस्यीय क्रिया है। यह वाष्पीकरण कम करके मृदा आर्द्रता धारण (मृदा में जल का अंतःस्यदन) सुकर बनाती है और मृदा संरचना सुधारने और मृदा अपरदन रोकने में उपयोगी है। इसमें पादपों के चारों ओर की भूमि को भूसा, घास, फसल अवशिष्टों के कंपोस्ट, प्लास्टिक शीटों से ढकना अंतर्निहित है ताकि वाष्पीकरण सीमित हो और जैव पदार्थ जुड़ सकें। किसानों द्वारा सजीव पलवारना भी अपनाई जाती है, जिसमें हितलाभों फसल जैसे मकई से पहले या साथ-साथ तेज़ी से उगने वाली फलियाँ स्थापित की जाती हैं और उपयुक्त समय पर मृदा में समाविष्ट की जाती हैं। गेहूँ और मकई में प्रति हेक्टेयर भिन्न-भिन्न मात्राओं में प्रयुक्त घास पलवार को नियंत्रित खेती में 8 से 58 प्रतिशत उपज बढ़ाने वाला पाया गया है।

समोच्च खेती पर्वतीय क्षेत्रों में अपनाई जाने वाली एक अन्य सस्यीय प्रणाली है जिसमें खेती पहाड़ियों के ऊपर और नीचे के बदले समोच्च रेखाओं के साथ-साथ की जाती है। इसमें हल जुताई, बीज बुआई, रोपाई और एकधा सस्यन कार्य समोच्च रेखाओं के साथ-साथ किए जाते हैं, परिणामतः मेढ़ और खूडों का निर्माण स्वतः हो जाता है। यह लघु रोधकों और वर्षा जल रोक कर ''जलाशय'' के रूप में भी कार्य करते हैं तथा जल का अपवाह, पोषक तत्वों की क्षति और मृदा अपरदन में कमी करते हैं।

मृदा में जैव पदार्थों का समावेश और सस्यावर्तन का प्रयोग संरक्षण कृषि के अनिवार्य घटक हैं। वे फसलों का उत्पादन बढ़ाने के लिए मृदा की क्षमता सुधारते हैं और वायु एवं जल द्वारा उपरदन रोकते है। परंतु मृदा अपरदन और भूमि निम्नीकरण रोकना मात्र ही संरक्षण प्रणालियों का उद्देश्य नहीं है। उनके उद्देश्यों में शामिल हैं : (i) कृषि कार्यप्रणालियों में फसल पशुधन का समाकलन; (ii) मृदा प्रणालियों के लिए जैव संहति बढ़ाना; (iii) जैव और अजैव पोषक पदार्थों का प्रयोग इष्टतम करना; (iv) खरपतवार, कीटों और रोगों को नियंत्रित करने के लिए पारितंत्र आधारित और समाकलित प्रबंधन विधियों का प्रयोग करना।

समाकलित कीट प्रबंधन (IPM) प्रणालियां इस समय किसानों द्वारा निम्नलिखित को लक्ष्य रखकर प्रयोग की जाती है : (i) कीटों की आबादी (उनके पूर्ण विनाश के बदले) को हानिकारक (आर्थिक प्रभाव सीमा) स्तर से नीचे रखना; (ii) जैवविविधता सहित पर्यावरण का परिरक्षण और संरक्षण; और (iii) वनस्पति संरक्षण को यहाँ तक कि छोटे किसानों के लिए भी व्यावहारिक सुरक्षित और लाभकारी बनाना। IPM का मुख्य घटक जैविक अभिकर्त्ताओं का प्रयोग है जो कीटों के स्वाभाविक शत्रु हैं और इसलिए खेत में अपनी आबादी सीमित रखते हैं।

14.6 वितरणात्मक प्रणालियाँ

वितरणात्मक प्रणालियाँ कटाई के बाद की प्रणालियां हैं। कृषि वस्तुएँ बाजार के लिए पैदा की जाती हैं जहाँ अन्य प्रयोक्ताओं द्वारा या संसाधनकर्त्ताओं द्वारा उन्हें खरीदा जाता है जो उन्हें संसाधित उत्पादों के रूप में बदल कर उनके मूल्य बढ़ाते हैं। कटाई

के बाद की प्रणालियां और कार्य रूप, समय, स्थान और स्वामित्व उपयोगिताएँ उत्पन्न करती हैं। इसका अभिप्राय उपभोक्ता को उत्पाद उस रूप में उपलब्ध करना है जिसमें वह उसे चाहता है, वह भी तब जबकि उसे इसकी आवश्यकता होती है और उस स्थान पर जहां वह उसे खरीद सकता है। इस विचार से उत्पाद, कटाई के बाद की प्रणालियां साधारण प्रणालियों, जैसे सफाई और श्रेणीकरण से अधिक जटिल प्रणालियों, जैसे पिराई, प्रोसेसिंग और डिब्बाबंदी तक उत्पाद पर निर्भर करती हैं। ये सभी पण्यवस्तुओं की भंडारण अवधि बढ़ाने के लिए योगदान कर सकते हैं। इस भाग में हम फार्म स्तर पर अपनाई गई कुछ सामान्य प्रणालियां बताएंगे जो उपभोक्ताओं के लिए गुणवत्ता की वांछित अवस्था में पण्यवस्तुओं का वितरण सुकर बनाती हैं।

सफाई, मानकीकरण और श्रेणीकरण : सफाई वह प्रक्रिया है जिससे भूसा, भूसी, मिट्टी, पत्थर आदि के रूप में अशुद्धताएँ हितलाभों से अलग की जाती हैं। फार्म स्तर पर यह हाथ से किया जाता है और इसमें हितलाभों को छानना, धोना और सुखाना शामिल है। सब्जियों के मामले में धुलाई आम बात है और फलों के मामले में थोड़ा कम होता है, इस प्रयोजन में कीचड़ और मिट्टी हटाना होता है। **मानकीकरण** इन विशेषताओं के आधार पर उत्पाद की गुणवत्ता का मानक निर्धारित करने की प्रक्रिया हैः वजन, आकार, रंग, आकृति, बनावट, नमी, रेशा आकार, बाह्य पदार्थ अंश, रासायनिक अंश, परिपक्वता, मिठास, स्वाद आदि। यह उपभोक्ता के लिए उत्पाद की गुणवत्ता एकसमान और विपणन की प्रक्रिया अधिक आसान बनाता है।

श्रेणीकरण (ग्रेडिंग) उत्पाद के गुणवत्ता मानकों के अनुसार उत्पाद को भिन्न-भिन्न ढेरों में छाँटना है। सफाई और श्रेणीकरण प्रणालियां उत्पादक के (फार्म) स्तर पर या विपणन श्रृंखला की अनुवर्ती अवस्थाओं में आरंभ हो सकती है। भारत में कई उत्पादों के लिए सरकार द्वारा निर्धारित मानकों के अनुसार श्रेणीकरण अनिवार्य है। कृषि उत्पादों के श्रेणीकरण की प्रणाली को केन्द्रीकृत श्रेणीकरण प्रणाली कहा जाता है। कहा जाता है कि इसमें विपणन और निरीक्षण निदेशालय की निर्दिष्ट प्रयोगशालाओं में गहन जाँच द्वारा शुद्धता और गुणवत्ता मानक लागू करना अंतर्निहित है जो कृषि उत्पादक शुद्धता और गुणवत्ता मानक पूरा करते हैं, उन्हें एगमार्क लेबल प्रदान किए जाते हैं। फल, सब्जी, धान्य (सीरियल), दलहन और अण्डे जैसी पण्यवस्तुओं के मामले में विकेन्द्रीकृत श्रेणीकरण प्रणाली अपनाई जाती है जिसके लिए विस्तृत परीक्षण व्यवस्था की आवश्यकता नहीं होती है और भौतिक दिखावट के आधार पर श्रेणीकरण हो सकता है। श्रेणीकरण का प्रयोजन पण्यवस्तुओं की भौतिक और शुद्धता विशेषताओं में अंतर के आधार पर कीमत विभेदन का लाभ लेना है।

भंडारण : कृषि पण्यवस्तुओं की आपूर्ति ऋतु के अनुसार अलग-अलग होती है परंतु उनकी मांग पूरे वर्षभर रहती है। इसलिए भंडारण एक ऐसा आवश्यक कार्य है जो उत्पाद की गुणवत्ता और मात्रा का अनुरक्षण सुनिश्चित करता है। भंडारण उत्पादकों द्वारा पण्यवस्तु का तब तक रखना भी आसान बनाता है जबतक बाजार में सही कीमत प्राप्त नहीं हो सकती है। परंपरागत संरचनाएं और भंडारण पात्र जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों में अनाज स्टोर किया जाता है, स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री से बनाए जाते हैं, वे आकार, साइज़ और क्षमता में भिन्न-भिन्न होते हैं। सामान्य बनावटों और इन पात्रों में शामिल है जूट से बनी हुई बोरियाँ, जली हुई क्ले से बनाए हुए मिट्टी के पात्र आदि होते हैं। ये आधे से तीन क्विंटल तक क्षमता के होते हैं, बांस का ढांचा, भूसे का ढांचा (जो धान की पुआल से बनाए गए वृत्ताकर ढाँचे होते हैं) और ईंट या पत्थर

से निर्मित ढाँचों/परंपरागत फार्म और परिवार स्तर की भंडारण प्रणालियों में नमक, राख, कपूर, चूना और पोंगामिया की पत्तियाँ होती हैं। इन्हें पण्यवस्तु से मिलाया जाता है और कीट संक्रमण रोकने के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की संरचनाओं में रखा जाता है। भूमिगत और पृष्ठीय दोनों भंडारण प्रणालियां अभी भी बहुत स्थानों में प्रयोग में हैं, आजकल विनाशशील उत्पादों, जैसे फलों, सब्जियों, दूध, डेयरी और गोश्त उत्पादों के लिए प्रयुक्त शीत भंडारगृह रेफ्रिजरेटर जैसी संरचनाएँ हैं। शीतलन गुणवत्ता में खराबी रोकता है। शीत भंडारगृह उत्पादों को सही तापमान में स्टोर करने का विकल्प देता है।

पैकेजिंग : उत्पादों को ले जाने और बेचने से पहले उनकी पैकेजिंग, लपेटने और टोकरियों रखना महत्त्वपूर्ण कार्य है। वे उत्पाद को सुरक्षित करते हैं, ढेर का आकार कम करता है, संचालन और परिवहन करना आसान होता है, उत्पाद की स्वच्छता और सुनिश्चित करता है और मिलावट रोकता है। यह सब मिलकर उत्पाद के भंडारण अवधि बढ़ाते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के उत्पादकों के लिए विपणन और वितरण की अलग-अलग स्तरों पर अलग-अलग किस्म की पैकेजिंग सामग्री प्रयुक्त की जाती है। इनमें शामिल हैं : टाट और कपड़े के थैले, लकड़ी के क्रेट, पुआल की टोकरियाँ, PVC और प्लास्टिक ट्रे, चालीदार फाइबर बोर्ड, टिन, ग्लास, अल्यूमिनियम फॉइल और कार्डबोर्ड के डिब्बे। पैकेजिंग सामग्री और कंटेनर का विकल्प उत्पाद के स्वरूप और विपणन स्तर पर निर्भर करता है। रक्षात्मक शक्ति के वांछित स्तर– आकर्षण, उपभोक्ता सुविधा, किफायत और खाद्य उत्पाद से रासायनिक प्रतिक्रिया का उन्मूलन आदि कारक पैकेजिंग की सामग्री के चुनाव में महत्त्वपूर्ण पहलू हैं। संसाधित उत्पादों के मामले में पैकिंग के बारे में उत्पाद के लेबल पर विनिर्माण और उत्पादिता समाप्ति की तारीख, मूल्य, निर्माण स्थान आदि के बारे में आवश्यक जानकारी देना अनिवार्य आवश्यकता है। इस प्रकार पैकेजिंग ऐसी होनी चाहिए कि वह लेबलिंग/अपेक्षिताएँ पूरी कर सके।

बोध प्रश्न 2

नीचे दिए गए स्थान में अपने उत्तर लगभग 50 शब्दों में दीजिए।

1) वे चार घटक बताइए जिन पर धारणीय कृषि की प्रणालियाँ आधारित हैं?

.....

.....

.....

.....

2) ''पोषक तत्वों का समाकलित प्रयोग'' की प्रणाली में क्या अंतर्निहित है? यह किस तरीके से उपयोगी है?

.....

.....

.....

.....

3) ''सिंचाई समय सारणी'' क्या है, किस प्रकार यह फसल उत्पादन प्रणाली के रूप में उपयोगी है?

.....

.....

.....

4) ''जल के संयोजी प्रयोग'' के चार लाभ बताइए।

.....

.....

.....

5) भिन्न-भिन्न वैकल्पिक सिंचाई विधियों में ''जल प्रयोग दक्षता'' की दृष्टि से कौन सबसे अधिक उपयोगी है?

.....

.....

.....

6) किस प्रकार के क्षेत्र/प्रदेश में ''समोच्च कृषि'' की जाती है? किस प्रकार यह विधि उत्पादन/पर्यावरण क्षतियाँ न्यूनीकरण में सहायक है?

.....

.....

.....

14.7 नई प्रचलित कृषि कार्यप्रणालियाँ

नई कृषि प्रणालियों का प्रचार करने के लिए कई कार्यक्रम चलाए गए हैं। ये सरकार प्रायोजित प्रोत्साहनों और कृषक समुदाय द्वारा स्वैच्छिक पहलों और साथ ही निगम व्यापारिक हितों द्वारा प्रायोजित संवर्धनात्मक कार्यक्रमों के आधार पर महत्त्व धारण कर रहे हैं। इनमें से कुछ पहल कार्य की (जिनमें उपर्युक्त चर्चित चार प्रणालियों का परस्पर व्यापन अंतर्निहित है) संक्षिप्त रूपरेखा इस इकाई में प्रस्तुत की गई है।

14.7.1 कीटनाशक रहित प्रबंधन

कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग के बारे में जागरूकता बढ़ रही है, जो खेती की लागत बढ़ाते हैं और पर्यावरण को तथा प्रयोग करने वाले किसानों के स्वास्थ्य को भी उतनी ही अधिक गंभीर क्षति करते हैं। आंध्र प्रदेश सरकार ने समुदाय नियंत्रित धारणीय कृषि (CMSA) नाम की योजना के भाग के रूप में कीटनाशक रोधी कार्यक्रम (NPM) आरंभ किया है। किसानों के 'खेत स्कूल' के अंग के रूप में 2004 में प्रारंभ किये गये CMSA के अधीन किसानों ने कीटो, कीटनाशकों/परभक्षियों की पहचान करना,

और उनका जीवन चक्र, संख्या तथा कीट कलैण्डर तैयार करना सीखा है। उन्होंने फसल प्रबंधन में प्राकृतिक संसाधनों और स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री का सर्वोत्तम प्रयोग करना भी सीखा है। निम्नलिखित कुछ ऐसी प्रणालियाँ है जिन्हें किसानों ने इसके अधीन अपनाया :

- लार्वा/अंडों की अवस्था में मृदा में विद्यमान हानिकारक कीटों को नष्ट करने के लिए जल्दी जुताई;
- कीटनाशकों के न्यूनीकरण और बेहतर अंकुरण के लिए राख, गोमूत्र आदि से बीजों का उपचार।
- कीटों को कम करने के लिए सही मौसम और सही स्थानों पर फेरामोन ट्रेप, चिपचिपे प्लेट और अलाव;
- ग्रीन स्प्रे (हरा छिड़काव)।

स्वास्थ्य और पर्यावरण लाभों के अलावा CMSA के अधीन NPM का मुख्य आग्रह किसानों की लागत (उनकी उपज घटाए बिना) कम करना था। आंध्र प्रदेश में चार वर्षों (2004-2008) के अल्प समय में NPM 10 जिलों में 25,000 एकड़ से बढ़कर 18 जिलों में 6.75 लाख एकड़ में फैला है।

14.7.2 चावल सघनता कृषि प्रणाली (SRI)

SRI के नाम से ज्ञात, चावल सघनता प्रणाली भूमि और जल की तथा अन्य संसाधनों की भी वृद्धि उत्पादिता के लिए विकसित कृषि कार्यप्रणालियों का समूह है। SRI स्वस्थ, विशाल और गहरी जड़वाली प्रणालियां विकसित करने के सिद्धांत पर आधारित है जो सूखा, जलक्रांति और वायु क्षति का बेहतर प्रतिरोध कर सके। इसमें आदानों का बेहतर प्रबंधन, पौदों में परिवहन के नए तरीके उपयोग करने और जल तथा उर्वरक अनुप्रयोग प्रबंधन के तत्व शामिल हैं। SRI अधिकतर किसानों के अनुभव तथा स्थानीय संस्थागत नव प्रवर्तनों से विकसित किया गया है। SRI के कई स्पष्ट लाभ हैं : जैसे धान की उपज में वृद्धि, चावल की अधिक अच्छी गुणवत्ता, सिंचाई जल प्रयोग में कमी, और उत्पादन लागत में कमी। जलवायु परिवर्तन से वर्षा की बढ़ती हुई परिवर्तनशीलता और जल तथा भूमि के लिए बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा से SRI जल की प्रति बूंद उत्पादन बढ़ाने के लिए और कृषि जल मांग कम करने के लिए नए अवसर प्रदान करता है। इसके अलावा SRI में प्रयुक्त जैव आदान उत्पादन या परिवहन व्यय के बिना स्थानीय रूप से प्राप्त हो जाते हैं। वे आगे चलकर मृदा की उत्पादकता क्षमता सुधारते हैं। इन प्रणालियों के फलस्वरूप प्रचुर ऊर्जा बचत और ग्रीन हाउस गैसों की कमी होती है। SRI का एक अन्य प्रमुखता यह भी है कि ऐसी ही विधियां और प्रणालियों का विस्तार अन्य फसलों, जैसे मकई, दलहन और गेहूँ के लिए भी किया गया है।

14.7.3 जैव खेती

रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के संकट पर बढ़ती हुई चिंता न केवल मृदा स्वास्थ्य बल्कि मानव स्वास्थ्य से भी संबद्ध है। अतः ऐसे खाद्य और रेशों के लिए मांग बढ़ रही है जो उर्वरक या कीटनाशकों के रूप में रासायनिक पदार्थों के प्रयोग के बिना उगाए गए हों। इसका परिणाम यह हुआ कि ''जैव खेती'' के लिए कृषि में आंदोलन शुरू हुआ है और यह अब विश्वव्यापी परिदृश्य हो गया है। भारत में इसकी सफलता सरकार की पूर्वसक्रियता पर निर्भर करती है जिसे छोटे सीमांत किसानों

को न्यूनतम बाधा के साथ प्रमाणन के लिए संस्थागत क्रियाविधि विकसित करनी चाहिए। ऐसे प्रयास अभी कहीं नहीं दिखाई देते हैं। संपूर्ण प्रमाणन प्रक्रिया अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक समूहों के नियंत्रण में है जिसका अभिप्राय भारत जैसे देशों में किसानों के लिए अवहनीय लागत है।

14.7.4 संरक्षणात्मक कृषि कार्यप्रणालियों का अंगीकरण

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, संरक्षण कृषि का उद्देश्य धारणीय और लाभकारी कृषि प्राप्त करना है। परिणामस्वरूप इसका उद्देश्य तीन सिद्धांतों, न्यूनतम मृदाबाधा, स्थायी मृदा आवरण और फसल आवर्तन के प्रवर्तन द्वारा किसानों की आजीविका सुधारना भी है। सभी साइज़ के फार्मों और कृषि पारिस्थितिक प्रणालियों के लिए CA से प्रचुर संभावनाएँ हैं परंतु छोटी जोत के किसानों, विशेषकर, जो गंभीर श्रमिक और जल की कमी का सामना कर रहे हैं, उन्हें सबसे अधिक तुरंत आवश्यकता है। यह पर्यावरण समस्याओं और धारणीयता से लाभकारी कृषि उत्पादन का मिलाने का तरीका है। विशेषज्ञों द्वारा इसे धारणीय भूमि प्रबंधन (SLM) के लिए महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में जाना गया है।

यह इस वचन के कारण है विशेषकर विकासशील और आविर्भावी अर्थव्यवस्था में CA के संवर्धन में खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) सक्रिय रूप से सम्मिलित है। CA केवल उसी समय इष्टतम रूप से कार्य कर सकता है, जब विभिन्न तकनीकी क्षेत्रों पर समाकलित तरीके एकसाथ विचार किया जाता है। FAO की उपलब्ध विशेषज्ञता के समृद्ध मिश्रण की CA के बहुविज्ञानी स्वरूप को सदा आवश्यकता होगी क्योंकि यह विश्वभर में CA अवधारणा के प्रोत्साहन के लिए कार्य करता है। तालिका 14.1 विभिन्न महाद्वीपों मे CA प्रणालियों के अनुप्रयोग की प्रसार दर्शाता है। स्पष्टतः एशिया CA प्रणालियां ग्रहण करने में सबसे नीचे है जबकि दक्षिण अमेरिका और उत्तरी अमरीका इस रिपोर्ट में अग्रणी हैं।

तालिका 14.1 : संरक्षण कृषि का विश्वव्यापी अंगीकरण

महाद्वीप	क्षेत्रफल (000 हे.)	भूमंडलीय योग का प्रतिशत	कृषि योग्य फसली भूमि का प्रतिशत
दक्षिण अमरीका	55630	47.6	57.5
उत्तरी अमरीका	39981	34.1	15.5
आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड	17162	14.7	69
एशिया	2630	2.2	0.5
यूरोप	1150	1.0	0.4
अफ्रीका	368	0.3	6.1
भूमंडलीय योग	**116921**	**10.0**	**8.5**

स्रोत : रिज़नल डायलॉग... 2011 (ब्यौरों के लिए संदर्भ देखें।)

14.8 सारांश

हमारी विशाल जनसंख्या की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने की आवश्यकता ने हरित क्रांति विधियों/प्रणालियों के अधीन अंगीकृत दृष्टिकोण अनिवार्य बना दिया। इसने खाद्य पर्याप्तता तथा निर्यात के लिए अधिशेष प्राप्त करने में देश की सहायता की। इस

उपलब्धि के साथ-साथ उत्पादकता और धारणीयता की समस्याओं के क्षेत्र में अनुभूत महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं के कारण उत्पादन प्रणालियों में सुधार और अपनाई गई विधियों को कृषि विकास की नीति में प्रमुख स्थान मिला। कालान्तर में भारतीय कृषि प्रणाली ने बहुत से स्वयं-सीखी और वैज्ञानिक रूप से अनुसंधान की गई प्रणालियाँ अपनाई। इन्होंने उत्पाद प्रणालियों के पर्यावरण मैत्रीपूर्ण विधियां प्राप्त करने में सहायता की। अन्य प्रयोजनों के साथ-साथ कि इन प्रणालियों ने निम्नलिखित प्राप्त करने में सहायता की है : वर्धित उत्पादन, उच्चतम आय, मृदा और जल संसाधन दक्षता, कटाई के बाद की क्षतियों में कमी आदि। इकाई में भारत में पिछले पांच दशाब्दियों की अवधि में विकसित और क्रियान्वित विभिन्न विधियाँ और प्रणालियाँ प्रस्तुत की गई हैं।

14.9 शब्दावली

जैव पदार्थ : पशु खाद, हरी खाद, फसल अवशिष्ट, घरेलू अवशिष्ट और कंपोस्ट सहित पादप या पशु प्रदत्त का प्राकृतिक सामग्री, जैव उर्वरक है। ऐसी सामग्री उर्वरक के रूप में या तो सीधे या पशु या मानव खाद्य के रूप में चक्रित होने के बाद प्रयुक्त की जाती है।

जैव उर्वरक : कुछ जीवों का कृत्रिम रूप से बहुसंवर्धन जो मृदा उर्वरता और फसल उत्पादकता सुधार सकते हैं। वे ऐसे उपक्रम है जिनमें सक्रिय घटकों के रूप में सूक्ष्म जीवों की दक्ष नस्लों की सजीव कोशिकाएँ होती हैं।

अनुक्रमिक बहु सस्यन : इसका संबंध सघन आदान प्रबंधन से अल्पकालिक फसल की किस्मों की खेती की प्रणाली से है।

पोषक तत्वों का समाकलित प्रयोग : यह ऐसी प्रणाली है जिसमें संतुलित तरीके में पादप/फसल द्वारा अपेक्षित सभी महत्त्वपूर्ण पोषक तत्वों की दक्षता और विवेकपूर्ण आपूर्ति/प्रयोग अंतर्निहित है। यह मृदा के रासायनिक और भौतिक गुणधर्मों को सुधारने और पुनः स्थापित करने में सहायता करता है।

सिंचाई समय सारणी : फसलों के लिए जल की कमी/अतिरिक्त मात्रा के कुप्रभावों को नियंत्रित करने के लिए प्रणाली के रूप में ''सिंचाई समय सारणी'' का अनुसरण किया जाता है। इसमें फसलों के लिए प्रयुक्त किए जाने वाली जल का समय और मात्रा का ठीक-ठीक तालमेल बिठाया जाता है। यह ऐसे कारकों पर आधारित है जैसे फल जड़ क्षेत्र में जल की मात्रा, पिछली सिंचाई के बाद और फसल वृद्धि अवस्था के दौरान फसल द्वारा ग्रहण जल की मात्रा आदि।

14.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Handbook of Agricultre (2011): Indian Council of Agricultural Research, New Delhi.

Ghosh, Nilabja (2004): Promoting Biofertilisers in Indian Agricultre, Economic and Political Weekly, December 25.

Regional Dialogue on Conservation Agricultre in South Asia : Proceedings and Recommendations, APAAR, CIMMYT and ICAR, New Delhi, 2011.

Sangwan, Satpal (2000): Level of Agricultural Technology in India (1757 – 1857), *Asian Agri-History,* 11(1) : 5-25.

V&A Programme (2009): The System of Rice Intensification: Vulnerability and Adaptation Experiences from Rajasthan and Andhra Pradash, SDCV&A Programme, India.

14.11 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

1) देखिए भाग 14.1 और उत्तर दीजिए।

2) देखिए उपभाग 14.2.2 और उत्तर दीजिए।

3) देखिए उपभाग 14.2.2 और उत्तर दीजिए।

4) देखिए उपभाग 14.2.5 और उत्तर दीजिए।

बोध प्रश्न 2

1) देखिए भाग 14.3 और उत्तर दीजिए।

2) देखिए उपभाग 14.3.2 और उत्तर दीजिए।

3) देखिए उपभाग 14.3.3 और उत्तर दीजिए।

4) देखिए उपभाग 14.4.1 और उत्तर दीजिए।

5) देखिए उपभाग 14.4.2 और उत्तर दीजिए।

6) देखिए भाग 14.5 और उत्तर दीजिए।